भाषा शिक्षण के तरीक़े

मुरलीधर गुर्जर

बच्चों के लिए भाषा सीखने-सिखाने की प्रक्रिया शुरुआती शिक्षण का महत्त्वपूर्ण पक्ष है। यह लेख पढ़ना-लिखना सीखने की कई तरह की कक्षागत प्रक्रियाओं की चर्चा करता है। लेखक अनुभवों के आधार पर बताते हैं कि पढ़ना-लिखना सीखने के पारम्परिक तरीक़े बहुत संगत नहीं होते और रटने पर ज़ोर देने के चलते बच्चे भाषा की समझ विकसित नहीं कर पाते। लेख में वे उदाहरण के साथ यह भी बताते हैं कि पारम्परिक तरीक़ों की बजाय भाषा सीखने के विभिन्न नवाचारी तरीक़ों का कक्षाओं में इस्तेमाल भाषा अधिगम के लिए अधिक उपयोगी है। -सं.

बालक जब स्कूल आता है तो अपने साथ इतना अनुभव लेकर आता है कि वह अपने परिवेश की ध्वनियों से सम्बन्ध जोड़ पाने में सक्षम होता है, चाहे वह उन्हें मौखिक सुने या फिर पढ़कर। वह ध्वनियों को सुनता है, उनको अपने अनुभव के साथ जोड़ता है और उन्हें अर्थ देता है। लिखने में, इससे एक क़दम आगे बढ़कर उसे अपने अनुभवों को काग़ज़ पर उतारना होता है। लिखने के इस ढंग को अपने अनुभवों से जोड़ने का काम बच्चा, स्कूल के वातावरण में स्वतः ही करने लगता है। पढ़ना-लिखना समझने में प्रतीकों की पहचान, वर्गीकरण, उच्चारण, प्रतीकों के साथ मात्राओं के लगने पर उच्चारण में होने वाले परिवर्तन को समझने व समझाने का विशेष प्रयास और सकारात्मक वातावरण देने का काम विद्यालय करता है।

बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने के कई तरीक़े हैं। सभी तरीक़े बच्चों की सीखने-सिखाने में मदद करते रहे हैं, लेकिन कुछ तरीक़े बच्चों के सीखने के ढंग के अनुरूप और समझ विकास की दृष्टि से अधिक सार्थक होते हैं। ऐसा मेरा अनुभव है। शिक्षण प्रक्रिया में बच्चों की उम्र, कक्षा स्तर, सीखने के मसौदे (यथा– पढ़ने का कौशल, विषय सामग्री, आदि), सीखने की गति एवं बाल मनोविज्ञान की समझ के अनुरूप सोची गईं विविध गतिविधियाँ करने से सीखने की गति बढ़ सकती

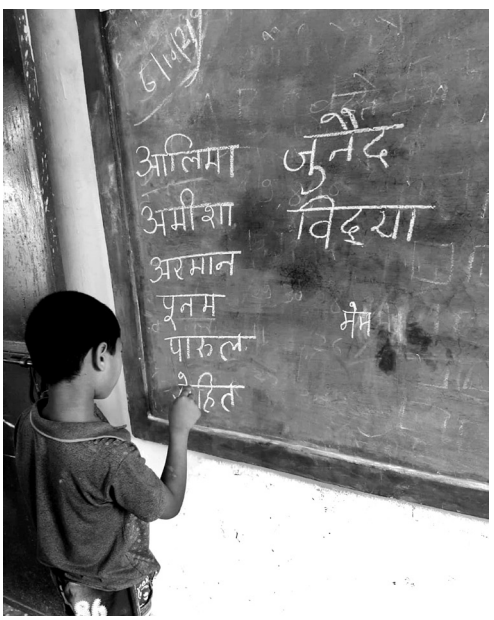

चित्र : पारुल बत्रा दुग्गल

है। बच्चों के साथ किए जाने वाले इन कार्यों में चर्चाएँ और बच्चों को स्वतंत्र करने के प्रयास के मौक़े, जिनमें ग़लती करने पर उपहास अथवा दण्ड का डर न हो, आवश्यक हैं। इसके लिए उन्हें सीखने के सार्थक वातावरण में पर्याप्त अवसर मिलने की ज़रूरत है। इस प्रकार के मौक़ों से बच्चे पढ़ने-लिखने की भाषाई कुशलता भी हासिल कर पाएँगे।

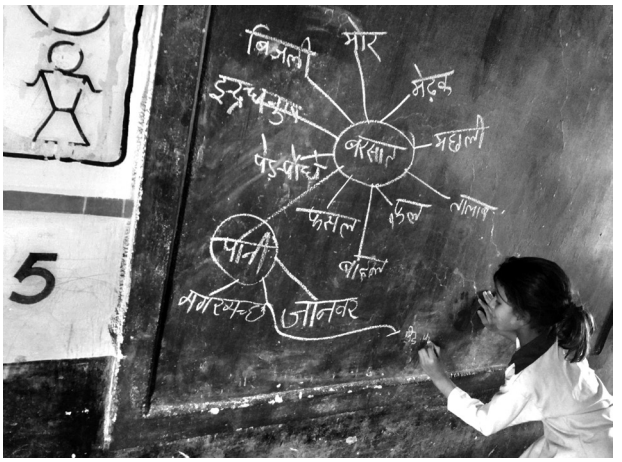

चित्र : मुरलीधर गुर्जर

सामान्यतः, भाषा शिक्षण की यह समझ बनी हुई है कि पहले क, ख, ग, आदि वर्ण याद करवा लो। जब बालक सभी वर्ण याद कर ले और उन्हें पहचानने व लिखने लग जाए, तब उसे मात्राओं की बारहखड़ी याद करवाई जाती है। इसके बाद पढ़ना और लिखना सिखाया जाता है। फिर दो-तीन वर्ण के शब्द पढ़वाए जाते हैं। पढ़ने के इस ढंग में शब्द को मन में एक-एक वर्ण में तोड़ने और फिर जोड़ने की प्रक्रिया सिखाई जाती है। इस क्रम से, उसे धीरे-धीरे वाक्य को धाराप्रवाह पढ़ने की ओर बढ़ना होता है। इस तरीक़े में ख़ामी यह है कि वर्ण क, ख, ग, आदि बच्चे के लिए अमूर्त होते हैं। वह उनका वास्ता सीधे-सीधे किसी चीज़ से नहीं जोड़ पाता है। इन वर्णों से उसके मन में कोई छवि भी नहीं बनती। इससे धीरे-धीरे बच्चे की सीखने की गति और कम होने लगती है। उसे शब्द पढ़ने और लिखने की प्रक्रिया में ज़्यादा समय लगने लगता है, और उसके पढ़ने में प्रवाह जल्दी नहीं आ पाता है।

दूसरा तरीक़ा यह है कि वर्ण से शुरू करने की जगह शिक्षक 'क' से कबूतर, 'ख' से ख़रगोश बताते हुए वर्णों को याद करवाते हैं, और आगे वही प्रक्रिया लेते हैं जो ऊपर अपनाई गई है। यहाँ भी बच्चों के पठन में प्रवाह की कमी होती है। इस विधि में बच्चे वर्णमाला को सन्दर्भ के साथ जोड़कर याद तो कर लेते हैं, लेकिन समझना यहाँ भी गौण ही है। शिक्षा सहयोगी अपनी प्रक्रिया को यह कहके पुष्ट करता है कि बच्चा 'क' को कबूतर के साथ जोड़कर देख तो रहा है। लेकिन यहाँ कबूतर पर किसी तरह की बातचीत नहीं होती है। बच्चा 'क' और कबूतर नाम में आपसी सम्बन्ध देख नहीं पाता है। कबूतर क्या है, और कबूतर शब्द में 'क' का क्या स्थान है, इसे वह नहीं समझ पाता है। बच्चों के लिए कई बार कार्डों पर बने चित्रों के साथ दिए गए शब्द उस चित्र के लिए स्वाभाविक रूप से ज्ञात शब्द नहीं होते। और वैसे भी इन कार्डों पर बनी छवि में भी पूरे शब्द को चित्र रूप में पहचानना व चित्र को ठीक से देखना ही होता है। सार्थक न होने के कारण अक्षर की पहचान नहीं हो पाती।

सन्दर्भ के साथ पढ़ना

इस तरीक़े में पहले किसी सन्दर्भ पर चर्चा की जाती है। मसलन, कबूतर पर बच्चों के साथ चर्चा करना। बोर्ड पर कबूतर का चित्र बनाकर उसके नीचे कबूतर शब्द लिखकर यह पहचान करवाई जाती है कि यह जो लिखा गया है, वह कबूतर है। यानी, यह चित्र कबूतर का है और वही लिखा भी गया है। यह माना जाता है कि जब बच्चा शब्द की आकृति को कबूतर के साथ जोड़कर देखेगा, उसके दिमाग़ में कबूतर पर की गई चर्चा में आए सन्दर्भ होंगे। यानी, बच्चा शब्द की आकृति को भी सार्थकता के साथ पहचान रहा होगा। हालाँकि,

यहाँ पर वह शब्द को एक चित्र के रूप में ही पढ़ रहा होता है, पर इस प्रक्रिया में वह शब्द-चित्र को समझ रहा होता है। यह सहज प्रक्रिया उसे पढ़ने की मूलभूत दक्षताओं के विकास में मदद कर रही होती है। इस प्रकार, धीरे-धीरे नए शब्द पढ़ना और उनके साथ-साथ कुछ वर्णों व मात्राओं की पहचान का काम किया जा सकता है। ऐसा करने से सीखने की प्रक्रिया आगे चलने लगती है। इस प्रक्रिया का फ़ायदा यह है कि वर्णों को अलग-अलग करके पढ़ने के स्थान पर बच्चा शुरू से ही अर्थपूर्ण शब्द पढ़ना सीख रहा होता है। यही पढ़ने का सही तरीक़ा है, क्योंकि अक्षर-अक्षर अथवा हिज्जे-हिज्जे कर पढ़ने पर वाक्य ही नहीं, शब्द के भी अर्थ निर्माण का कार्य बहुत मुश्किल हो जाता है।

हिमांशु खोले

इसी तरह का प्रयास कुछ शिक्षकों ने कक्षा के बच्चों के नामों से शुरू किया है। इस तरीक़े से पढ़ना सिखाने में बच्चा अपने नाम को आसानी से और कम मेहनत में पहचानने लगता है, क्योंकि वह उसका अपना नाम होता है, और अपने नाम को पढ़ व लिख पाने की तीव्र इच्छा हर बच्चे में होती है। साथियों में रुचि के कारण वह उनके नामों को भी आसानी से पहचानने लगता है। उनके नाम का सन्दर्भ तो उसके लिए किसी वस्तु, प्राणी, पक्षी, आदि के चित्र से भी ज़्यादा मूर्त होता है। नाम का सम्बन्ध अपने दोस्त के मूर्त रूप से जोड़कर वह पहले से भी देख रहा होता है, और अब उसे नाम की लिखित आकृति को जोड़ने की ओर बढ़ना होता है। धीरे-धीरे मैंने भी अन्य सार्थक शब्दों की पहचान के साथ-साथ पढ़ पाने की ओर बढ़ने के लिए बच्चों के नामों का प्रयोग किया। बच्चों के नाम का उपयोग कर पढ़ना सिखाने के काम का अनुभव मैं यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ। मेरी कक्षा 1 के लगभग 20-25 बच्चे थे। यह काम मैंने अगस्त में शुरू किया और बच्चों को अब स्कूल में आते लगभग 3 माह हो गए थे।

मैंने सभी बच्चों के नाम के कार्ड बनाए और हर बच्चे को उसके नाम का कार्ड दे दिया। बच्चे पहले भी अपने नाम को नोटबुक या पुस्तक पर लिखा देखते थे। नाम की ध्वनि तो वे घर, परिवार, समुदाय, दोस्तों के बीच और स्कूल में सुनते ही थे। बच्चों को कहा गया कि उनके पास जो कार्ड आया है, उसपर उनका नाम लिखा है, उसे ठीक से देख लें। कुछ देर तक देखने के बाद बच्चों से कार्ड वापस ले लिए गए। फिर सभी कार्डों को इकट्ठा करके ताश के पत्तों की तरह मिला दिया गया। अब एक-एक कार्ड दिखाते हुए बच्चों से पूछा गया कि इसपर किसका नाम लिखा है। किसी ने बताया, किसी ने नहीं बताया। जिसने नहीं बताया, उसे मैंने बता दिया। यह प्रक्रिया एक-दो दिन चली और बच्चे अपने लिखित नाम पहचानने लगे। इस प्रक्रिया में बच्चे ख़ुद का नाम तो पहचान ही रहे थे, साथ में अपने साथियों के नामों की पहचान पर भी उनकी हल्की-फुल्की समझ बन रही थी। कुछ दिनों बाद, पर्ची पर हर बच्चे को उसके दोस्तों के भी नाम दिए गए। इस प्रकार, एक-दो माह में हर बच्चा कक्षा के सभी बच्चों के नाम पढ़ने लगा। इसके साथ-साथ हम नाम की प्रथम ध्वनि-अन्तिम ध्वनि, नाम को तोड़ना-जोड़ना, मात्राओं की पहचान, आदि पर भी काम कर रहे थे। इससे बच्चों की वर्ण पहचान की प्रक्रिया में बहुत इज़ाफ़ा हुआ और वे सहजता के साथ शब्द पढ़ने की ओर चल पड़े।

बच्चों के साथ रोज़ होने वाली बातचीत में उनके अनुभव वे साझा करते थे। बच्चों के इन अनुभवों को बोर्ड पर लिखकर, उनपर चर्चा भी की गई और उन अनुभवों में भी कक्षा के बच्चों के नामों का समावेश किया गया। बच्चों के परिवार के सदस्यों के नामों को भी उन अनुभवों में शामिल किया गया और नए शब्द-नाम पहचानने पर निरन्तर ज़ोर दिया गया। मसलन, रमेश से पूछा गया कि आपने कल क्या काम किया था? रमेश ने जवाब दिया कि (बच्चों के शब्दों को ब्लैकबोर्ड पर मानक शब्दों में लिखा गया) कल तो मैं तालाब में नहाने गया था, मेरे साथ सुरेश भी था। फिर अपनी मम्मी के साथ मामा के घर गया। इस प्रकार एक-दो लाइन का अनुभव लिखकर, इन लाइनों को तीन-चार बार पढ़ा गया। बच्चे भी साथ-साथ बोलते हुए पढ़ रहे थे। पढ़ते समय शब्दों पर उँगली रखता जाता था। इन दो वाक्यों में कुछ शब्दों पर विशेष ज़ोर दिया गया, जैसे– तालाब, मामा, सुरेश, आदि। फिर इन शब्दों को अलग से लिखकर इनकी शब्द-आकृति पहचानने पर ज़ोर दिया गया और वही प्रक्रिया अपनाई गई। अर्थात, प्रथम ध्वनि-अन्तिम ध्वनि की पहचान, शब्दों को तोड़ना-जोड़ना, आदि।[1] कक्षा में कहानी या कविता सुनाकर उसके दो-तीन वाक्यों को बोर्ड पर लिखकर भी उपरोक्त प्रक्रिया अपनाई गई।

इस प्रकार सीधे-सीधे वर्ण सिखाने की बजाय ऐसे अभ्यास करने ज़्यादा फलदायक हैं जिनमें पूरे शब्दों को पढ़ना हो। और जब बच्चों के पास शब्दों का एक भण्डार बन जाए तब उनमें आई ध्वनियों को अलग-अलग करके देखने और उन्हें किसी प्रतीक के साथ जोड़कर देखने जैसे काम भी आवश्यकतानुसार किए जा सकते हैं। पढ़ने के लिए इस तरह की स्वाभाविक प्रक्रियाएँ करने से आगे बच्चे को शब्दों / वाक्यों को पढ़ने में समस्या नहीं आती है।

मेरा अनुभव यह रहा है कि बच्चे के साथ शब्द-पहचान व पढ़ने के प्रयास का कार्य अलग-अलग तरीक़ों से हो तो उस कार्य में बच्चों की रुचि रहती है और सीखना भी आसान व तेज़ गति से होता है।

कुल मिलाकर, चूँकि सार्थक पढ़ने के प्रयास से ही पढ़ना सीखा जाता है, अतः बच्चे के लिए प्रिंट रिच वातावरण बनाने की भी ज़रूरत है। स्कूल की दीवारों पर पोस्टर हों और बच्चों के जाने-समझे व उनके लिए रोचक मसलों पर कुछ-कुछ लिखा हो। बच्चों के स्तर की कहानियों, कविताओं एवं अन्य सामग्री वाली पुस्तकें स्कूल में बच्चों को पढ़ने के लिए सरलता से उपलब्ध हों। इससे बच्चे लगातार पढ़ने के प्रयास में संलग्न रहेंगे और धीरे-धीरे धाराप्रवाह पढ़ने में उनकी मदद होगी। इसके लिए पढ़ी हुई सामग्री एवं अन्य विषयों पर बच्चों के साथ संवाद करना भी मददगार होगा।

1. इस विषय पर विस्तृत चर्चा के लिए *पाठशाला* सितम्बर 2022 में प्रकाशित अंक 13 में छपे मीनू पालीवाल के लेख 'बच्चों के नामों से पढ़ना-लिखना सिखाना' देखें।

मुरलीधर गुर्जर ने समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की है। आपने लम्बे समय तक 'दिगंतर' जयपुर में बच्चों को पढ़ाने के साथ ही शिक्षा के अन्य पहलुओं पर कार्य किया है। आपको शिक्षा और शिक्षा के अधिकारों पर कार्य करने वाली संस्थाओं 'समांतर' और 'प्रयत्न' में कार्य करने का अनुभव है। पत्र-पत्रिकाओं में शिक्षा पर लेख लिखते रहते हैं। मुरलीधर वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन टोंक, राजस्थान में कार्यरत हैं।

सम्पर्क : murlidhar.gurjar@azimpremjifoundation.org